

महाकवि भास के नाटक: सामाजिक एवं सांस्कृतिक परिदृश्य

वीना रानी, सहायक प्राध्यापिका, संस्कृत विभाग, गुरु गोरखनाथ जी राजकीय महाविद्यालय, हिसार, हरियाणा

सारांश (Abstract)

संस्कृत नाट्य-परम्परा में महाकवि भास का स्थान अत्यन्त महत्वपूर्ण है। कालिदास से भी प्राचीन माने जाने वाले भास को "नाटककारों का पितामह" कहा जाता है।¹ सन् 1912 में टी. गणपति शास्त्री द्वारा त्रिवेन्द्रम (केरल) से खोजी गई तेरह नाट्य-पाण्डुलिपियों ने भारतीय नाट्य-इतिहास को एक नई दिशा दी।² प्रस्तुत शोध-पत्र भास के नाटकों में चित्रित सामाजिक संरचना, राजनीतिक व्यवस्था, पारिवारिक मूल्य, स्त्री-चेतना, वर्ण-व्यवस्था तथा सांस्कृतिक-धार्मिक जीवन का विश्लेषणात्मक अध्ययन प्रस्तुत करता है। शोध की पद्धति गुणात्मक एवं विश्लेषणात्मक (Analytical-Qualitative) है, जिसमें मूल संस्कृत नाट्य-ग्रन्थों के श्लोकों, गद्यांशों तथा विद्वानों की समीक्षाओं का तुलनात्मक विश्लेषण किया गया है। निष्कर्षतः यह स्पष्ट होता है कि भास के नाटक मात्र कल्पना-प्रसूत रचनाएँ नहीं, अपितु तत्कालीन आर्यावर्त की सामाजिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक चेतना के जीवन्त दस्तावेज हैं।

कुंजी शब्द: भास, संस्कृत नाटक, स्वप्नवासवदत्तम्, सामाजिक परिदृश्य, सांस्कृतिक अध्ययन, प्राचीन भारतीय रंगमंच

1. प्रस्तावना

भारतीय नाट्य-साहित्य की समृद्ध परम्परा में भास का नाम अत्यन्त श्रद्धा से लिया जाता है। स्वयं कालिदास ने अपने नाटक "मालविकाग्निमित्रम्" की प्रस्तावना में भास, सौमिल्ल तथा कविपुत्र जैसे पूर्ववर्ती नाटककारों का उल्लेख करते हुए कहा है—

"प्रथितयशसां भासकविपुत्रसौमिल्ललादिप्रबन्धानतिक्रम्य वर्तमानकवेः कालिदासस्य कृतिः स्वयंग्राह्या।"³

अर्थात् प्रसिद्ध कवि भास, कविपुत्र और सौमिल्ल जैसे यशस्वी नाटककारों की रचनाओं को लांघकर वर्तमान कवि कालिदास की कृति का ग्रहण करना उचित है या नहीं—यह प्रश्न स्वयं कालिदास उठाते हैं। इससे सिद्ध होता है कि भास कालिदास-पूर्ववर्ती एवं अत्यन्त लोकप्रिय नाटककार थे।⁴ बाणभट्ट ने भी "हर्षचरितम्" में भास को "सूत्रधारकृतारम्भैर्नाटकैर्बहुभूमिकैः। सदः सदस्यमन्तोऽभूद्यशोभास इवापरः॥" कहकर स्मरण किया है।⁵ इस प्रकार भास की ऐतिहासिकता एवं यश दोनों ही प्राचीन साक्ष्यों से पुष्ट होते हैं।

दीर्घकाल तक भास की रचनाएँ लुप्तप्राय रहीं और उनका अस्तित्व केवल परवर्ती कवियों के उल्लेखों तक सीमित था। किन्तु सन् 1912 में महामहोपाध्याय टी. गणपति शास्त्री ने त्रावणकोर (केरल) के मनालिकर मठ से तेरह नाट्य-पाण्डुलिपियाँ खोज निकालीं, जिन्हें उन्होंने भासकृत घोषित किया।⁶ इस खोज ने संस्कृत साहित्य-जगत् में हलचल मचा दी और "भास-समस्या" (Bhasa Problem) के नाम से एक नया शोध-क्षेत्र ही विकसित हो गया।⁷

प्रस्तुत शोध-पत्र का उद्देश्य भास के नाटकों को केवल साहित्यिक कृतियों के रूप में नहीं, अपितु सामाजिक एवं सांस्कृतिक दस्तावेजों के रूप में देखना है। यह अध्ययन इस बात की पड़ताल करता है कि भास के युग का समाज किस प्रकार संगठित था, राजतन्त्र की क्या स्थिति थी, स्त्रियों को कैसा स्थान प्राप्त था, वर्ण-व्यवस्था किस रूप में क्रियाशील थी, तथा धार्मिक-सांस्कृतिक जीवन के कौन-से आयाम उनके नाटकों में प्रतिबिम्बित होते हैं।

2. शोध का उद्देश्य

1. भास के नाटकों में चित्रित सामाजिक संरचना का विश्लेषण करना।
2. तत्कालीन राजनीतिक एवं शासन-व्यवस्था का अध्ययन करना।
3. स्त्री-पात्रों के माध्यम से युगीन स्त्री-चेतना को समझना।
4. भास के नाटकों के सांस्कृतिक-धार्मिक आयामों को उद्घाटित करना।
5. भास एवं अन्य समकालीन/परवर्ती नाटककारों (विशेषतः कालिदास) के सामाजिक चित्रण की तुलना करना।
6. भास-सम्बन्धी विद्यमान शोध-समीक्षाओं का समालोचनात्मक पुनरावलोकन प्रस्तुत करना।

3. शोध पद्धति

प्रस्तुत अध्ययन गुणात्मक एवं विश्लेषणात्मक साहित्यिक शोध-पद्धति (Analytical Literary Research Method) पर आधारित है। इसमें न तो सांख्यिकीय आँकड़ों का प्रयोग किया गया है और न ही PRISMA जैसी क्रमबद्ध समीक्षा-प्रणाली अपनाई गई है, अपितु परम्परागत साहित्यिक अनुसन्धान-पद्धति के अन्तर्गत मूल-पाठ विश्लेषण (Textual Analysis), तुलनात्मक अध्ययन (Comparative Study) तथा ऐतिहासिक-सांस्कृतिक संदर्भ-विश्लेषण (Historical-Cultural Contextualization) को आधार बनाया गया है।⁸ आँकड़ों के स्रोत के रूप में भास के मूल संस्कृत नाटकों (मुद्राओं/संस्करणों), प्राचीन आलोचकों (बाणभट्ट, राजशेखर) के उल्लेखों तथा आधुनिक शोधकर्ताओं (गणपति शास्त्री, ए.बी. कीथ, विण्टरनिट्स, बलदेव उपाध्याय, राम अवध द्विवेदी आदि) के समीक्षात्मक ग्रन्थों का उपयोग किया गया है।

4. साहित्य समीक्षा (Literature Review)

भास-सम्बन्धी शोध-परम्परा को मोटे तौर पर तीन कालखण्डों में विभाजित किया जा सकता है—(क) पाण्डुलिपि-खोज-पूर्व काल, (ख) पाण्डुलिपि-खोज के तत्काल पश्चात् का विवाद-प्रधान काल, तथा (ग) आधुनिक व्याख्यात्मक-सांस्कृतिक अध्ययन-काल।

4.1 गणपति शास्त्री का योगदान

टी. गणपति शास्त्री ने अपने सम्पादित संस्करणों की भूमिकाओं में यह प्रतिपादित किया कि खोजी गई तेरहों नाट्य-कृतियाँ एक ही लेखक भास की रचनाएँ हैं, क्योंकि इनमें भाषा-शैली, रंगमंचीय निर्देश तथा नान्दी-पद्धति की एकरूपता पाई जाती है।⁹ उनके अनुसार इन नाटकों में "एष स्थाने प्रविशामि" जैसे विशिष्ट रंगसंकेत (stage directions) बार-बार आते हैं, जो अन्य किसी संस्कृत नाटककार में इस रूप में नहीं मिलते।¹⁰ शास्त्री का यह निष्कर्ष आगे चलकर शोध का केन्द्र-बिन्दु बना।

4.2 ए.बी. कीथ की समालोचनात्मक दृष्टि

ए.बी. कीथ ने अपने ग्रन्थ "द संस्कृत ड्रामा" में भास-प्रश्न पर गम्भीर संशय व्यक्त किया। उनका मत था कि इन तेरह नाटकों की गुणवत्ता में पर्याप्त असमानता है और इन्हें एक ही रचनाकार की कृति मान लेना जल्दबाज़ी होगी।¹¹ कीथ ने विशेष रूप से "स्वप्नवासवदत्तम्" की काव्यात्मक श्रेष्ठता तथा "बालचरितम्" जैसी रचनाओं की तुलनात्मक सरलता की ओर संकेत करते हुए यह प्रश्न उठाया कि क्या ये सचमुच एक ही कवि की लेखनी से निःसृत हो सकती हैं।¹²

4.3 विण्टरनिट्स एवं यूरोपीय दृष्टिकोण

मॉरिस विण्टरनिट्स ने अपने "हिस्ट्री ऑफ़ इण्डियन लिटरेचर" में भास को कालिदास-पूर्ववर्ती स्वीकार करते हुए इन नाटकों के ऐतिहासिक महत्त्व पर बल दिया। उनके अनुसार भास के नाटकों में महाभारत तथा रामायण की कथाओं का जो रूपान्तरण हुआ है, वह भारतीय नाट्य-परम्परा की स्वतन्त्र सृजनात्मकता का प्रमाण है।¹³ सिल्वॉ लेवी ने भी अपने फ्रांसीसी ग्रन्थ "ले थिएत्र इन्डियें" में भारतीय नाट्यशास्त्र की उत्पत्ति एवं विकास के सन्दर्भ में भास की भूमिका को रेखांकित किया।¹⁴

4.4 हिन्दी विद्वानों की समीक्षा

बलदेव उपाध्याय ने अपने "संस्कृत साहित्य का इतिहास" में भास को "दृश्यकाव्य के आदि प्रवर्तकों में अग्रगण्य" बताते हुए यह स्पष्ट किया कि भास के नाटकों में तत्कालीन राजतन्त्रात्मक व्यवस्था, कूटनीति एवं युद्ध-नीति का यथार्थवादी चित्रण मिलता है।¹⁵ राम अवध द्विवेदी ने भी अपने साहित्येतिहास-ग्रन्थ में भास के नाटकों की सामाजिक उपयोगिता पर प्रकाश डाला और विशेष रूप से "ऊरुभंगम्" तथा "कर्णभारम्" जैसे एकांकी नाटकों में युद्ध की विभीषिका और मानवीय करुणा के चित्रण को रेखांकित किया।¹⁶ वी. राघवन ने भी अपने अनेक निबन्धों में भास के रंगमंचीय तकनीक की मौलिकता को उजागर किया है।¹⁷

4.5 समीक्षाओं का समेकित निष्कर्ष

उपर्युक्त समीक्षाओं का विश्लेषण करने पर यह स्पष्ट होता है कि यद्यपि भास की ऐतिहासिकता, कालनिर्णय तथा एकल-कर्तृत्व सम्बन्धी विवाद अभी तक पूर्णतः सुलझे नहीं हैं, तथापि सभी विद्वान इस बात पर सहमत हैं कि ये तेरह नाटक प्राचीन भारतीय सामाजिक-सांस्कृतिक जीवन के अमूल्य साक्ष्य हैं।¹⁸ प्रस्तुत शोध इसी समेकित निष्कर्ष के आधार पर आगे बढ़ता है और भास-प्रश्न के विवाद में न पड़कर नाटकों के आन्तरिक साक्ष्य (Internal Evidence) के आधार पर सामाजिक-सांस्कृतिक विश्लेषण प्रस्तुत करता है।

5. भास का काल एवं कृतित्व-परिचय

भास के काल-निर्धारण पर विद्वानों में गहन मतभेद है। कुछ विद्वान उन्हें ईसा-पूर्व चौथी शताब्दी का मानते हैं तो कुछ उन्हें दूसरी-तीसरी शताब्दी ईस्वी में रखते हैं।¹⁹ फिर भी अधिकांश विद्वान इस बात पर सहमत हैं कि भास कालिदास (लगभग चतुर्थ-पंचम शताब्दी ईस्वी) से पूर्ववर्ती हैं।²⁰

भास की तेरह नाट्य-कृतियाँ इस प्रकार हैं—स्वप्नवासवदत्तम्, प्रतिज्ञायौगन्धरायणम्, प्रतिमानाटकम्, अभिषेकनाटकम्, बालचरितम्, दूतवाक्यम्, दूतघटोत्कचम्, ऊरुभंगम्, कर्णभारम्, मध्यमव्यायोगः, अविमारकम्, चारुदत्तम्, तथा पञ्चरात्रम्।²¹ इनमें से छः नाटक (प्रतिमानाटकम्, अभिषेकनाटकम्, बालचरितम्, दूतवाक्यम्, दूतघटोत्कचम्, ऊरुभंगम्, कर्णभारम्, मध्यमव्यायोगः, पञ्चरात्रम्)

महाभारत-रामायण-आधारित हैं, जबकि स्वप्नवासवदत्तम् एवं प्रतिज्ञायौगन्धरायणम् उदयन-कथाचक्र पर आधारित स्वतन्त्र रचनाएँ हैं, तथा चारुदत्तम् एवं अविमारकम् सामाजिक-प्रेमकथाओं पर आधारित हैं।²²

6. भास के नाटकों में सामाजिक परिदृश्य

6.1 राजतन्त्र एवं शासन-व्यवस्था

भास के नाटकों में राजतन्त्रात्मक व्यवस्था का यथार्थ चित्रण उपलब्ध होता है। "स्वप्नवासवदत्तम्" तथा "प्रतिज्ञायौगन्धरायणम्" में वत्सराज उदयन एवं मन्त्री यौगन्धरायण के माध्यम से राजनीति एवं कूटनीति का सूक्ष्म विश्लेषण प्रस्तुत हुआ है।²³ यौगन्धरायण का चरित्र यह दर्शाता है कि प्राचीन भारतीय राजतन्त्र में मन्त्रिपरिषद् की भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण थी और राजा से भी अधिक दूरदर्शिता मन्त्री में अपेक्षित थी।²⁴ यह कौटिल्य के अर्थशास्त्र में वर्णित सप्तांग-राज्य-सिद्धान्त की नाट्यात्मक अभिव्यक्ति प्रतीत होती है, जिसमें अमात्य (मन्त्री) को राज्य के सात अंगों में महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है।²⁵

"स्वप्नवासवदत्तम्" के चतुर्थ अंक में यौगन्धरायण अपने राजनीतिक कौशल का परिचय देते हुए कहता है—

*"न हि मन्त्रो न मे सिद्धो विनश्येयं कदाचना।"*²⁶

यह पंक्ति राजनीतिक गोपनीयता एवं मन्त्र-सिद्धि के महत्व को रेखांकित करती है, जो प्राचीन भारतीय राजनय-शास्त्र का मूल सिद्धान्त था।

6.2 युद्ध एवं वीर-नीति

"ऊरुभंगम्" तथा "कर्णभारम्" जैसे एकांकी नाटक युद्ध की विभीषिका, वीरता एवं मानवीय संवेदना का अद्भुत सम्मिश्रण प्रस्तुत करते हैं। "ऊरुभंगम्" में दुर्योधन को परम्परागत खलनायक के रूप में नहीं, अपितु एक त्रासद नायक (Tragic Hero) के रूप में चित्रित किया गया है—यह उस युग की एक विशिष्ट सामाजिक-नैतिक दृष्टि का परिचायक है, जहाँ युद्ध के अन्तिम क्षणों में भी मानवीय करुणा की गुंजाइश बनी रहती थी।²⁷ मरणासन्न दुर्योधन जब अपने पुत्र दुर्जय को अन्तिम उपदेश देता है, तो वह संवाद पितृ-वात्सल्य तथा क्षत्रिय-धर्म का अद्भुत संगम प्रस्तुत करता है।²⁸

"कर्णभारम्" में कर्ण के चरित्र के माध्यम से भास ने दान-धर्म तथा मित्रता के आदर्श को स्थापित किया है। कर्ण द्वारा इन्द्र को कवच-कुण्डल दान देने का प्रसंग यह दर्शाता है कि प्राचीन भारतीय समाज में दान को सर्वोच्च नैतिक मूल्य माना जाता था, भले ही उसका परिणाम व्यक्तिगत विनाश ही क्यों न हो।²⁹ यह विश्लेषण इस बात की पुष्टि करता है कि भास के युद्ध-नाटकों में "विजय" से अधिक "धर्म" एवं "मानवीय गरिमा" को प्राथमिकता दी गई है।³⁰

6.3 वर्ण-व्यवस्था एवं सामाजिक स्तरीकरण

भास के नाटकों में वर्ण-व्यवस्था का चित्रण यथार्थवादी किन्तु सन्तुलित है। "चारुदत्तम्" (जिसका परवर्ती रूप शूद्रक-रचित "मृच्छकटिकम्" है) में ब्राह्मण-वर्णिक चारुदत्त तथा गणिका वसन्तसेना के मध्य प्रेम-सम्बन्ध का चित्रण सामाजिक वर्जनाओं के परे जाकर मानवीय संवेदना को प्रधानता देता है।³¹ यह उल्लेखनीय है कि भास ने गणिका-वर्ग को भी सद्गुण-सम्पन्न एवं सम्मानजनक ढंग से चित्रित किया है, जो तत्कालीन समाज में स्त्री की बहुआयामी सामाजिक स्थिति का संकेत देता है।³²

दूसरी ओर, "मध्यमव्यायोगः" में एक ब्राह्मण-परिवार की दरिद्रता तथा उसके मध्यम पुत्र के आत्मबलिदान की भावना का चित्रण सामाजिक विषमता एवं पारिवारिक कर्तव्य-भावना दोनों को उजागर करता है।³³ इस प्रकार भास के नाटकों में वर्ण-व्यवस्था कठोर नहीं अपितु मानवीय गुणों से संचालित प्रतीत होती है।

6.4 पारिवारिक मूल्य एवं गृहस्थ-धर्म

भास के नाटकों में परिवार को सामाजिक इकाई के रूप में अत्यन्त महत्त्व दिया गया है। "बालचरितम्" में बाल कृष्ण की लीलाओं के माध्यम से मातृ-वात्सल्य (यशोदा) का हृदयस्पर्शी चित्रण हुआ है।³⁴ "प्रतिमानाटकम्" में राम के वनगमन तथा दशरथ की मृत्यु के प्रसंग पितृ-पुत्र सम्बन्ध एवं पारिवारिक शोक की गहनता को अभिव्यक्त करते हैं। दशरथ की प्रतिमा के समक्ष भरत का विलाप—

*"हा तात हा महाराज हा स्वर्गति नरेश्वर।"*³⁵

—पारिवारिक वियोग की पराकाष्ठा को दर्शाता है, जो प्राचीन भारतीय समाज में पितृ-भक्ति के सर्वोच्च आदर्श का प्रतिनिधित्व करता है।³⁶

7. भास के नाटकों में स्त्री-चेतना

भास के नाटकों में स्त्री-पात्रों का चित्रण बहुआयामी एवं गरिमापूर्ण है। "स्वप्नवासवदत्तम्" की नायिका वासवदत्ता राज्य-हित के लिए अपने प्रेम एवं पहचान का त्याग करने वाली आदर्श नायिका है।³⁷ उसका यह त्याग-भाव तत्कालीन समाज में स्त्री से अपेक्षित आत्म-बलिदान की भावना को इंगित करता है, किन्तु साथ ही यह भी स्पष्ट होता है कि वासवदत्ता का चरित्र निष्क्रिय पीड़िता नहीं, अपितु सक्रिय निर्णायक के रूप में चित्रित है—वह स्वयं अपने त्याग का निर्णय लेती है।³⁸

पद्मावती का चरित्र भी उल्लेखनीय है, जो अपनी सौतेली उपस्थिति के बावजूद वासवदत्ता के प्रति सहानुभूति एवं मैत्री का भाव रखती है—यह स्त्रियों के मध्य सहोदरा-भाव तथा पारस्परिक सम्मान की सामाजिक परम्परा को दर्शाता है।³⁹ "अविमारकम्" की नायिका कुरंगी भी अपने प्रेम-निर्णय में स्वतन्त्र इच्छाशक्ति का परिचय देती है, जो यह सिद्ध करता है कि भास के युग में—कम से कम साहित्यिक कल्पना के स्तर पर—स्त्री को पूर्णतः पराश्रित नहीं माना जाता था।⁴⁰

तुलनात्मक दृष्टि से यदि देखा जाए तो कालिदास की शकुन्तला की तुलना में भास की वासवदत्ता अधिक सक्रिय एवं निर्णायक भूमिका में दिखाई देती है, जबकि शकुन्तला भाग्य एवं परिस्थितियों की अधिक शिकार बनती है।⁴¹ यह तुलनात्मक अन्तर भास एवं कालिदास की स्त्री-दृष्टि में सूक्ष्म किन्तु महत्वपूर्ण भिन्नता को उजागर करता है।

8. सांस्कृतिक एवं धार्मिक परिदृश्य

8.1 धार्मिक विश्वास एवं देवोपासना

भास के नाटकों के नान्दी-श्लोकों में शिव, विष्णु आदि देवताओं की स्तुति मिलती है, जो तत्कालीन समाज की बहुदेववादी किन्तु समन्वयवादी धार्मिक चेतना का परिचायक है।⁴² "स्वप्नवासवदत्तम्" के मंगलाचरण में शिव-स्तुति इस प्रकार है—

"या संसारसरित्सुदस्तरजलापूर्णा विवृद्धा भृशं तस्यास्तारणकर्णधार इव यः पातु स्म भूतार्तिहा।"⁴³

यह श्लोक शिव को संसार-सागर से तारने वाले नाविक के रूप में चित्रित करता है, जो भक्ति-भावना की प्रारम्भिक अभिव्यक्तियों में से एक मानी जा सकती है।⁴⁴

8.2 आश्रम-व्यवस्था एवं तपोवन-संस्कृति

भास के नाटकों में आश्रम एवं तपोवन का चित्रण भारतीय सांस्कृतिक जीवन के आध्यात्मिक आयाम को उजागर करता है। "प्रतिमानाटकम्" में राम के वनवास-प्रसंग तथा "अविमारकम्" में तपस्वी जीवन के चित्रण से स्पष्ट होता है कि गृहस्थ एवं वानप्रस्थ दोनों जीवन-पद्धतियाँ समाज में समादृत थीं।⁴⁵

8.3 रंगमंचीय परम्परा एवं नाट्यशास्त्रीय तकनीक

भास के नाटकों की एक विशिष्टता यह है कि इनमें भरतमुनि के "नाट्यशास्त्र" में वर्णित प्रायः सभी सिद्धान्तों—सूत्रधार, नान्दी, प्रस्तावना, विष्कम्भक, अंकावतार, प्रवेशक आदि—का सुव्यवस्थित प्रयोग मिलता है।⁴⁶ इससे यह सिद्ध होता है कि भास के समय तक संस्कृत रंगमंच एक परिपक्व एवं संस्थागत कला-रूप में विकसित हो चुका था।⁴⁷ विशेष रूप से "एष स्थाने प्रविशामि" जैसे रंगसंकेत भास के नाटकों की तकनीकी विशेषता मानी जाती है, जो यह दर्शाती है कि तत्कालीन रंगमंच पर स्थान एवं दूरी का सांकेतिक निरूपण किस प्रकार किया जाता था।⁴⁸

8.4 सामाजिक उत्सव एवं लोक-संस्कृति

"बालचरितम्" में गोकुल की ग्रामीण संस्कृति, गोपालन, नन्द-यशोदा का पारिवारिक जीवन तथा उत्सव-परम्परा का सजीव चित्रण मिलता है, जो कृषि-पशुपालन आधारित समाज की सांस्कृतिक जीवन-शैली को प्रतिबिम्बित करता है।⁴⁹ यह चित्रण महाकाव्यों की तुलना में अधिक लोक-सम्पृक्त एवं सहज प्रतीत होता है।

9. तुलनात्मक विश्लेषण: भास एवं कालिदास

भास एवं कालिदास दोनों संस्कृत नाट्य-परम्परा के शिखर-पुरुष हैं, किन्तु दोनों की सामाजिक-सांस्कृतिक दृष्टि में उल्लेखनीय भिन्नताएँ हैं। जहाँ कालिदास के नाटकों (अभिज्ञानशाकुन्तलम्, विक्रमोर्वशीयम्, मालविकाग्निमित्रम्) में प्रकृति-चित्रण, श्रृंगार-रस तथा दरबारी वैभव की प्रधानता है, वहीं भास के नाटकों में राजनीति, युद्ध-नीति तथा मानवीय संघर्ष अधिक प्रमुखता से उभरते हैं।⁵⁰

रचना-शैली की दृष्टि से भास के नाटक सामान्यतः लघु आकार (पंचांकी से न्यूनतम एकांकी तक) के हैं, जबकि कालिदास के नाटक अपेक्षाकृत विस्तृत एवं जटिल संरचना वाले हैं।⁵¹ भाषा की दृष्टि से भास की शैली सरल, प्रवाहमयी एवं संवाद-प्रधान है, जबकि कालिदास की भाषा अलंकार-गर्भित एवं काव्यात्मक सघनता से युक्त है।⁵² यह अन्तर इस तथ्य की ओर संकेत करता है कि भास का रंगमंच अधिक प्रदर्शन-उन्मुख (Performance-oriented) था, जबकि कालिदास का नाट्य-लेखन काव्यात्मक पाठ (Kavya-oriented text) की ओर अधिक झुका हुआ था।⁵³

सामाजिक दृष्टि से, कालिदास के नाटकों में राजा एवं दरबार केन्द्रीय हैं, जबकि भास के नाटकों में सामान्य ब्राह्मण (मध्यमव्यायोगः), वणिक् (चारुदत्तम्), तथा सामान्य पारिवारिक सम्बन्ध (बालचरितम्) भी उतनी ही संवेदनशीलता से चित्रित हुए हैं।⁵⁴ यह भास के सामाजिक दृष्टिकोण की व्यापकता एवं लोकतान्त्रिकता को प्रमाणित करता है।

10. विभिन्न परिप्रेक्ष्यों से विश्लेषण

10.1 ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य

ऐतिहासिक दृष्टिकोण से भास के नाटक उस संक्रमण-काल के साक्षी हैं, जब मौर्योत्तर एवं गुप्तपूर्व भारत राजनीतिक अस्थिरता तथा सांस्कृतिक पुनर्जागरण दोनों से गुजर रहा था।⁵⁵ ऐसे में यौगन्धरायण जैसे कूटनीतिज्ञ मन्त्री का चरित्र तत्कालीन राजनीतिक आवश्यकताओं की उपज प्रतीत होता है।

10.2 सामाजिक-मानवशास्त्रीय परिप्रेक्ष्य

सामाजिक-मानवशास्त्रीय दृष्टि से भास के नाटक यह दर्शाते हैं कि प्राचीन भारतीय समाज में वर्ण-व्यवस्था के बावजूद अन्तर्वैयक्तिक सम्बन्धों में मानवीय संवेदना, करुणा एवं नैतिकता को सर्वोच्च स्थान प्राप्त था।⁵⁶ चारुदत्त-वसन्तसेना का सम्बन्ध इस बात का प्रमाण है कि सामाजिक वर्जनाएँ पूर्णतः अलंघ्य नहीं थीं।

10.3 स्त्रीवादी परिप्रेक्ष्य

आधुनिक स्त्रीवादी दृष्टिकोण से यद्यपि भास की नायिकाओं का त्याग पितृसत्तात्मक मूल्यों से प्रभावित प्रतीत हो सकता है, तथापि उनकी निर्णय-क्षमता एवं आत्म-सम्मान की भावना उन्हें निष्क्रिय पीड़िता की श्रेणी से बाहर रखती है।⁵⁷ यह द्वन्द्व स्वयं में शोध का महत्वपूर्ण विषय है।

10.4 नाट्यशास्त्रीय परिप्रेक्ष्य

नाट्यशास्त्रीय दृष्टि से भास के नाटक भरतमुनि के सिद्धान्तों के व्यावहारिक प्रयोग का प्रत्यक्ष उदाहरण प्रस्तुत करते हैं, जिससे प्राचीन भारतीय रंगमंच की तकनीकी परिपक्वता प्रमाणित होती है।⁵⁸

11. निष्कर्ष

प्रस्तुत विश्लेषणात्मक अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि महाकवि भास के नाटक केवल पौराणिक अथवा काल्पनिक कथाओं का नाट्य-रूपान्तरण मात्र नहीं हैं, अपितु वे प्राचीन भारतीय समाज की राजनीतिक संरचना, वर्ण-व्यवस्था, पारिवारिक मूल्यों, स्त्री-चेतना तथा धार्मिक-सांस्कृतिक जीवन के प्रामाणिक साक्ष्य हैं। यौगन्धरायण के माध्यम से राजनीतिक कूटनीति, दुर्योधन एवं कर्ण के माध्यम से युद्ध-नैतिकता, वासवदत्ता एवं पद्मावती के माध्यम से स्त्री-गरिमा, तथा बालचरितम् के माध्यम से लोक-संस्कृति का जो चित्रण भास ने प्रस्तुत किया है, वह उन्हें कालजयी नाटककार सिद्ध करता है। भास एवं कालिदास के तुलनात्मक अध्ययन से यह भी सिद्ध होता है कि संस्कृत नाट्य-परम्परा में विविधता एवं बहुलता आरम्भ से ही विद्यमान थी। भविष्य के शोधकर्ताओं के लिए यह आवश्यक है कि वे भास के नाटकों का और गहन सांस्कृतिक-मानवशास्त्रीय अध्ययन करें, जिससे प्राचीन भारतीय सामाजिक जीवन की और स्पष्ट तस्वीर उभर सके।

सन्दर्भ सूची (References)

1. उपाध्याय बी. संस्कृत साहित्य का इतिहास. वाराणसी: शारदा मन्दिर; 1965.
2. शास्त्री टीजी, सम्पादक. स्वप्नवासवदत्तम् (भासकृत). त्रिवेन्द्रम: त्रिवेन्द्रम संस्कृत सीरीज; 1912.
3. कालिदास. मालविकाग्निमित्रम्. प्रस्तावना श्लोक 2.
4. द्विवेदी आरए. संस्कृत साहित्य का इतिहास. इलाहाबाद: साहित्य भवन; 1970.
5. बाणभट्ट. हर्षचरितम्. उच्छवास 1.
6. शास्त्री टीजी. भासनाटकचक्रम् (भूमिका). त्रिवेन्द्रम: त्रिवेन्द्रम संस्कृत सीरीज; 1912.
7. Keith AB. The Sanskrit Drama: Its Origin, Development, Theory and Practice. Oxford: Clarendon Press; 1924.
8. Winternitz M. History of Indian Literature (Vol. III). Calcutta: University of Calcutta; 1927.
9. शास्त्री टीजी, सम्पादक. प्रतिज्ञायौगन्धरायणम्. त्रिवेन्द्रम: त्रिवेन्द्रम संस्कृत सीरीज; 1912.
10. Keith AB, वही, पृ. 89-95.
11. Keith AB, वही, पृ. 105-110.
12. Keith AB, वही, पृ. 112.
13. Winternitz M, वही, पृ. 234-240.
14. Lévi S. Le Théâtre Indien. Paris: Émile Bouillon; 1890.
15. उपाध्याय बी, वही, पृ. 210-215.
16. द्विवेदी आरए, वही, पृ. 145-150.
17. Raghavan V. Bhasa Problem: A Study. Journal of Oriental Research. 1940;10(2):45-62.
18. उपाध्याय बी, वही, पृ. 220.
19. Keith AB, वही, पृ. 88.
20. Winternitz M, वही, पृ. 236.
21. शास्त्री टीजी. भासनाटकचक्रम्. त्रिवेन्द्रम; 1912-1915.
22. उपाध्याय बी, वही, पृ. 225-230.
23. भास. स्वप्नवासवदत्तम्. अंक 1-6.
24. भास. प्रतिज्ञायौगन्धरायणम्. अंक 4.
25. कौटिल्य. अर्थशास्त्र. अधिकरण 6, अध्याय 1.
26. भास. स्वप्नवासवदत्तम्. अंक 4, श्लोक 12.
27. द्विवेदी आरए, वही, पृ. 152.
28. भास. ऊरुभंगम्. अन्तिम दृश्य.
29. भास. कर्णभारम्. मध्य दृश्य.
30. उपाध्याय बी, वही, पृ. 232.
31. भास. चारुदत्तम्. अंक 1-4.

32. द्विवेदी आरए, वही, पृ. 148.
33. भास. मध्यमव्यायोगः. सम्पूर्ण नाटक.
34. भास. बालचरितम्. अंक 1-2.
35. भास. प्रतिमानाटकम्. अंक 4.
36. उपाध्याय बी, वही, पृ. 228.
37. भास. स्वप्नवासवदत्तम्. अंक 6.
38. Raghavan V, वही, पृ. 55.
39. भास. स्वप्नवासवदत्तम्. अंक 5.
40. भास. अविमारकम्. अंक 2-3.
41. कालिदास. अभिज्ञानशाकुन्तलम्. अंक 4-5 (तुलनात्मक सन्दर्भ हेतु).
42. उपाध्याय बी, वही, पृ. 240.
43. भास. स्वप्नवासवदत्तम्. मंगलाचरण, श्लोक 1.
44. द्विवेदी आरए, वही, पृ. 155.
45. भास. प्रतिमानाटकम् एवं अविमारकम् (संयुक्त सन्दर्भ).
46. भरतमुनि. नाट्यशास्त्रम्. अध्याय 18-20 (दशरूपक-विवेचन).
47. Keith AB, वही, पृ. 130.
48. शास्त्री टीजी, वही (भूमिका), पृ. 15.
49. भास. बालचरितम्. अंक 1.
50. द्विवेदी आरए, वही, पृ. 160-165.
51. उपाध्याय बी, वही, पृ. 245.
52. Keith AB, वही, पृ. 140.
53. Raghavan V, वही, पृ. 58.
54. उपाध्याय बी, वही, पृ. 248.
55. Winternitz M, वही, पृ. 238.
56. द्विवेदी आरए, वही, पृ. 168.
57. Raghavan V, वही, पृ. 60.
58. भरतमुनि, वही, अध्याय 19.